Bihar Board Class 12th Hindi Book Notes Chapter 9 प्रगीत और समाज

"प्रगीत' और समाज लेखक परिचय नामवर सिंह (1927)

जीवन-परिचय-
हिन्दी आलोचना के शिखर पुरुष नामवर सिंह का जन्म 28 जुलाई, सन् 1927 को जीअनपुर वाराणसी, उत्तरप्रदेश में हुआ। इनकी माता का नाम वागेश्वरी देवी और पिता का नाम नागर सिंह था जो एक शिक्षक थे। इनकी प्राथमिक शिक्षा आवाजापुर एवं कमलापुर, उत्तप्रदेश के गाँवों में हुई। वहीं इन्होंने हाई स्कूल हीवेट क्षत्रिय स्कूल, बनारस और इंटर उदय प्रताप कॉलेज, बनारस से किया। इसके बाद बी.एच.यू. से क्रमशः सन् 1949 एवं 1951 में बी. ए. और एम.ए. किया। साथ ही बी.एच.यू. से ही सन् 1956 में 'पृथ्वीराजरासो की भाषा' विषय पर पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। सन् 1953 में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अस्थाई व्याख्याता रहे।

सन् 1959-60 में सागर विश्वविद्यालय में असिस्टेंट प्रोफेसर के रूप में कार्य किया। इसके बाद सन् 1960-65 तक बनारस में रहकर स्वतन्त्र लेखन किया। वे 'जनयुग' (साप्ताहिक), दिल्ली में सम्पादक और राजकमल प्रकाशन में साहित्य सलाहकार भी रहे। सन् 1967 से 'आलोचना' त्रैमासिक के संपादन का कार्य संभाला। सन् 1970 में जोधपुर विश्वविद्यालय, राजस्थान में ही हिन्दी विभाग के अध्यक्ष पद पर प्रोफेसर के रूप में नियुक्त हुए।

इसके बाद सन् 1974 में कुछ समय के लिए कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी हिन्दी विद्यापीठ, आगरा के निदेशक और सन् 1974 में ही जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली के भारतीय भाषा केन्द्र में हिन्दी के प्रोफेसर के पद पर इनकी नियुक्ति हुई। जे.एन.यू. से सन् 1987 में सेवामुक्ति के बाद अगले पाँच वर्षों के लिए पुनर्नियुक्ति ! बाद में सन् 1993-96 तक राजा राममोहन राय लाइब्रेरी फाउंडेशन के अध्यक्ष के रूप में कार्य किया। संप्रतिः 'आलोचना' त्रैमासिक के प्रधान संपादक के रूप में कार्यरत।।

आलोचना-हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग, आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ, . छायावाद, पृथ्वीराजरासो की भाषा, इतिहास और आलोचना, कहानी : नई कहानी, कविता के लिए. प्रतिमान, दूसरी परंपरा की खोज, वाद-विवाद संवाद।

व्यक्ति व्यंजक ललित निबन्ध-बकलम खुद।। साक्षात्कारों का संग्रह-कहना न होगा।

भाषा-शिल्प की विशेषताएँ-नामवर सिंह जी ने सहित्य के अतिरिक्त भी अनेक विषयों का गहन अध्ययन किया था। साहित्य, भाषाशास्त्र, काव्यशास्त्र, पाश्चात्य आलोचना आदि विषय तो इनकी अभिरुचि के अंग हैं जिस कारण भाषा पर इनकी मजबूत पकड़ है। अपनी सशक्त, भाषा के कारण ही इन्होंने समीक्षा तथा सैद्धान्तिक व्याख्या में भी रचनात्मक साहित्य जैसा लालित्य उत्पन्न कर दिया है।

प्रगीत और समाज पाठ के सारांश

कविता संबंधी सामाजिक प्रश्न-कविता पर समाज का दबाव तीव्रता से महसूस किया जा रहा है। प्रगीत काव्य समाज शास्त्रीय विश्लेषण और सामाजिक व्याख्या के लिए सबसे कठिन चुनौती रखता है। लेकिन प्रगीतधर्मी कविताएँ सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति के लिए पर्याप्त नहीं समझी जाती है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी

प्रबंधकाव्यों को ही अपना आदर्श माना है। वे प्रगीत मुक्तकों को अधिक पसंद नहीं करते थे, इसीलिए आख्यानक काव्यों की रचना से संतोष व्यक्त करते थे।

मुक्तिबोध की कविताएँ-नई कविता के अंदर आत्मपरक कविताओं की एक ऐसी प्रबल प्रवृत्ति थी जो या तो समाज निरपेक्ष थी या फिर जिसकी सामाजिक अर्थवत्ता सीमित थी। इसलिए . व्यापक काव्य सिद्धान्त की स्थापना के लिए मुक्तिबोध की कविताओं का समावेश आवश्यक था। लेकिन मुक्तिबोध ने केवल लम्बी कविताएँ ही नहीं लिखीं। उनकी अनेक कविताएँ छोटी भी हैं जो कि कम सार्थक नहीं हैं। मुक्तिबोध का समूचा काव्य मूलतः आत्मपरक है। रचना-विन्यास में कहीं वह पूर्णतः नाट्यधर्मी है, कहीं नाटकीय एकालाप है, कहीं नाटकीय प्रगीत है और कहीं शुद्ध प्रगीत भी है। आत्मपरकता तथा भावमयता मुक्तिबोध की शक्ति है जो उनकी प्रत्येक कविता को गति और ऊर्जा प्रदान करती है।। . आत्मपरक प्रगीत-आत्मपरक प्रगीत भी नाट्यधर्मी लम्बी कविताओं के समान ही यथार्थ को प्रतिध्वनित करते हैं। एक प्रगीतधर्मी कविता में वस्तुगत यथार्थ अपनी चरम आत्मपरकता के रूप में ही व्यक्त होता है।

त्रिलोचन तथा नागार्जुन का काव्य-त्रिलोचन में कुछ चरित्र केन्द्रित लम्बी वर्णनात्मक कविताओं के अलावा ज्यादातर छोटे-छोटे गीत ही लिखे हैं। लेकिन जीवन, जगत और प्रकृति के जितने रंग-बिरंगे चित्र त्रिलोचन के काव्य संसार में मिलते हैं, वे अन्यत्र दुर्लभ हैं। वहीं नागार्जुन की आक्रामक काव्य प्रतिभा के बीच आत्मपरक प्रगीतात्मक अभिव्यक्ति के क्षण कम ही आते हैं। लेकिन जब आते हैं तो उनकी विकट तीव्रता प्रगीतों के परिचित संसार को एक झटके में छिन्न-भिन्न कर देती है। प्रगीत काव्य के प्रसंग में मुक्तिबोध, त्रिलोचन और नागार्जुन का उल्लेख एक नया प्रगीतधर्मी कवि-व्यक्तित्व है।

विभिन्न कवियों द्वारा प्रगीतों का निर्माण-यद्यपि हमारे साहित्य काव्योत्कर्ष के मानदंड प्रबंधकाव्यों के आधार पर बने हैं। लेकिन यहाँ की कविता का इतिहास मुख्यतः प्रगीत मुक्तकों. का है। कबीर, सूर, मीरा, नानक, रैदास आदि संतों ने प्रायः दोहे तथा गेय पद ही लिखे हैं। विद्यापति को हिन्दी का पहला कवि माना जाए तो हिन्दी कविता का उदय ही गीतों से हुआ है। लोकभाषा को साफ-सुथरी प्रगीतात्मकता का यह उन्मेष भारतीय साहित्य की अभूतपूर्व घटना है।

प्रगीतात्मकता का दूसरा उन्मेष-प्रगीतात्मकता का दूसरा उन्मेष रोमैंटिक उत्थान के साथ हुआ। इस रोमांटिक प्रगीतात्मकता के मूल में एक नया व्यक्तिवाद है, जहाँ समाज के बहिष्कार के द्वारा ही व्यक्ति अपनी सामाजिकता प्रमाणित करता है। इन रोमैंटिक प्रगीतों में आत्मीयता और ऐन्द्रियता कहीं अधिक है। इस दौरान राष्ट्रीयता संबंधी विचारों को काव्य रूप देनेवाले मैथिलीशरण गुप्त भी हुए। आलोचकों की दृष्टि में सच्चे अर्थों में प्रगीतात्मकता का आरंभ यही है, जिसका आधार है समाज के विरुद्ध व्यक्ति। इस प्रकार प्रगीतात्मकता का अर्थ हुआ 'एकांत संगीत' अथवा 'अकेले कंठ की पुकार'। लेकिन आगे चलकर स्वयं व्यक्ति के अंदर भी अंत:संघर्ष पैदा हुआ। विद्रोह का स्थान-आत्मविडंबना ने ले लिया और आत्मपरकता कदाचित् बढ़ी।

समाज पर आधारित काव्य-अकेलेपन के बाद कुछ लोगों ने जनता की स्थिति को काव्य – जावार बनाया जिससे कविता नितांत सामाजिक हो गई। इस कारण यह कवित्व से भी वंचित हो गई। फिर कुछ ही समय में नई कविता के अनेक कवियों ने हृदयगत स्थितियों का वर्णन करना शुरू किया। इसके बाद एक दौर ऐसा आया जब अनेक कवि अपने अंदर का दरवाजा तोड़कर एकदम बाहर निकल आए और व्यवस्था के विरोध के जुनून में उन्होंने ढेर सारी 'सामाजिक' कविताएँ लिख डाली, लेकिन यह दौर जल्दी ही समाप्त हो गया।

नई प्रगीतात्मकता का उभार-युवा पीढ़ी के कवियों द्वारा कविता के क्षेत्र में कुछ और परिवर्तन हुए। यह एक नई प्रगीतात्मकता का उभार है। आज कवि को अपने अंदर झाँकने या बाहरी यथार्थ का सामना करने में कोई हिचक नहीं है। उसकी नजर हर छोटी-से-छोटी घटना, स्थिति, वस्तु आदि पर है। इसी प्रकार उसमें अपने अंदर

https://www.evidyarthi.in/

उठनेवाली छोटी-से-छोटी लहर को पकड़कर शब्दों में बाँध लेने का उत्साह भी है। कवि अपने और समाज के बीच के रिश्ते को साधने की कोशिश कर रहा है। लेकिन यह रोमैंटिक गीतों को समाप्त करने या वैयक्तिक कविता को बढ़ाने का प्रयास नहीं है। अपितु इन कविताओं से यह बात पुष्ट होती जा रही है कि मितकथन में अतिकथन से अधिक शक्ति होती है और कभी-कभी ठंडे स्वर का प्रभाव गर्म होता है। यह एक नए ढंग की प्रगीतात्मकता के उभार का संकेत है।